वक्तुमर्हस्यशेषेण दिव्या ह्यात्मविभूतयः।
याभिर्विभूतिभिर्लोकानिमांस्त्वं व्याप्य तिष्ठसि।।१६।।

वक्तुम्=कहने को; **अर्हसि**=योग्य हैं; **अशेषेण**=विस्तार से; **दिव्याः**=अलौकिक; **हि**=निश्चित रूप से; **आत्म**=अपने; **विभूतयः**=ऐश्वर्य; **याभिः**=जिन; **विभूतिभिः**=ऐश्वर्यों के द्वारा; **लोकान् इमान्**=सम्पूर्ण लोकों को; **त्वम्**=आप; **व्याप्य**=व्याप्त करके; **तिष्ठसि**=स्थित हैं।

अनुवाद

कृपया मेरे लिए अपनी उन सम्पूर्ण दिव्य विभूतियों का वर्णन कीजिये, जिनके द्वारा आप इन सम्पूर्ण लोकों को व्याप्त करके स्थित हैं।।१६।।

तात्पर्य

प्रतीत होता है कि अर्जुन भगवान् श्रीकृष्ण के तत्त्वज्ञान से तृप्त हो चुका है। श्रीकृष्ण की विशेष अनुकम्पा से उसे प्रत्यक्ष अनुभव, बुद्धि, ज्ञान और इन तीनों से होने वाला सम्पूर्ण बोध है। वह समझ गया है कि श्रीकृष्ण स्वयं भगवान् हैं। अब इस विषय में उसके लिए कोई संशय नहीं रहा है। फिर भी श्रीकृष्ण से उसकी प्रार्थना है कि वे अपने सर्वव्यापक स्वरूप का वर्णन करें, जिससे भविष्य के मनुष्य, विशेष रूप से, निर्विशेषवादी जान सकें कि अपनी नाना शक्तियों के द्वारा वे किस प्रकार सर्वव्यापी हैं। अतएव स्मरण रहे कि अर्जुन की यह जिज्ञासा जनसाधारण की ओर से ही है।

कथं विद्यामहं योगिंस्त्वां सदा परिचिन्तयन्।
केषु केषु च भावेषु चिन्त्योऽसि भगवन्मया।।१७।।

कथम्=किस प्रकार; **विद्याम् अहम्**=मैं जानूँ; **योगिन्**=हे योगेश्वर; **त्वाम्**=आपको; **सदा**=नित्य-निरन्तर; **परिचिन्तयन्**=चिन्तन (स्मरण) करता हुआ; **केषु-केषु**=किस-किस; **च**=और; **भावेषु**=रूपों में; **चिन्त्यः असि**=आप का स्मरण करना चाहिये; **भगवन्**=हे परम पुरुषोत्तम; **मया**=मुझे।

अनुवाद

हे योगेश्वर! मैं किस प्रकार आपका नित्य स्मरण-चिन्तन करूँ? और हे भगवन्! किन-किन रूपों में मुझे आपका स्मरण करना चाहिये?।।१७।।

तात्पर्य

नौवें अध्याय में कहा जा चुका है कि श्रीभगवान् अपनी 'योगमाया' में छिपे हुए हैं; इसलिए एकमात्र शरणागत जीवों और भक्तों को उनका दर्शन हो सकता है। अर्जुन को विश्वास हो गया है कि उसके सखा श्रीकृष्ण स्वयं भगवान् हैं; फिर भी वह उस सार्वभौम पद्धति को जानने का अभिलाषी है, जिससे साधारणजन उन सर्वव्यापी प्रभु के तत्त्व को जान सकें। असुर और अनीश्वरवादियों सहित कोई भी साधारण मनुष्य श्रीकृष्ण को जानने की सामर्थ्य नहीं रखता, क्योंकि वे अपनी